जीव-रक्षा : सृष्टि-संतुलन के लिए आवश्यक

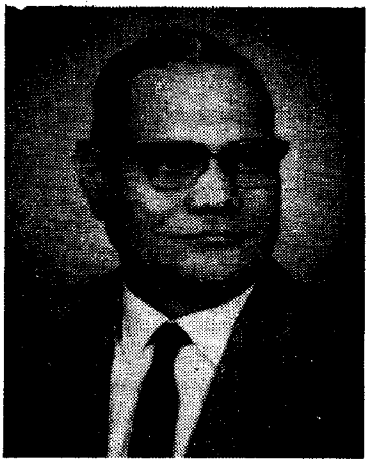

हुकमचन्द पारेख

आज जबकि विश्व की आधे से अधिक आबादी तनाव, संत्रास, कलह, हिंसा और रक्तपात का जीवन जी रही है; अहिंसा, सत्य, अचौर्य, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य और शाकाहार की चर्चा कुछ लोग बेहद अप्रासंगिक और गयी-गुजरी समझेंगे, किन्तु वस्तुतः बात ऐसी है नहीं क्योंकि यह बहुत स्पष्ट है कि हिंसा, प्रतिकार, झूठ, असंयम, युद्ध, शोषण इत्यादि किसी सभ्य समाज के मूल आधार नहीं बन सकते। यह कहना कभी भी संभव नहीं हो पायेगा कि जो लड़ रहा है, बैर भुना रहा है, कलह कर रहा है, हिंसा कर रहा है, झूठ बोल रहा है, या मांसाहार कर रहा है, अन्यों को मुश्किलों और तक़लीफों में डाल रहा है, नितांत क्रूर और दुष्ट है, वह सभ्य है। सभ्य लोग करें वैसा लेकिन वे कह नहीं सकते कि किसी सभ्य मनुष्य की पहचान जीवन के उक्त बर्बर मूल्य हो सकते हैं। बहुत कठिन होगा ऐसा सब तय कर पाना।

भारत एक ऐसा देश है, जहाँ विविधता है, और जहाँ सब प्रकार की मान्यताओं और धारणाओं वाले लोग एक साथ निवास करते हैं। यहाँ अनेक वेशभूषाएँ हैं, नाना भाषाएँ हैं, किस्म-किस्म के खानपान हैं, फिर भी इस बिन्दु पर सब एक मत हैं कि गांधी ने स्वराज्य के लिए जो अहिंसक रास्ता अपनाया था, वह सही था; सत्याग्रह में अमोघ शक्ति है, गौतम बुद्ध की करुणा अपराजिता थी, महाभारत के भयानक रक्तपात के बाद लगा था कि युद्ध एक बर्बर और गर्हित कर्म है और उसे दुनिया से अविलम्ब बिदा किया जाना चाहिये। वह हुआ नहीं, यह जुदा बात है; किन्तु मनुष्य ने अनुभव किया यह सच है। सती प्रथा का बन्द होना और देवी-देवताओं की वेदी पर भैंसों, बकरों, मुर्गों (यहाँ तक कि ज़िन्दा आदमी तक) का चढ़ाया जाना रुकना (यों इक्की-दुक्की घटनाएँ आज भी अखबारों में पढ़ने को मिल जाती हैं) कुछ सभ्य क़िस्म के मंगल संकेत हैं।

भारतीय धर्म शताब्दियों से अहिंसा और करुणा को मानवीय जीवन का शृंगार बनाये चले आ रहे हैं। असल में जब से आदमी ने खेती करना सीखा है, बाग-बगीचे लगाना जाना है, जीवन में सौन्दर्य को प्रतिष्ठित किया है, तब से उसके हिंसक-बर्बर कृत्य कुछ कम हुए हैं; और ऐसी घटनाओं और कार्यों को बल मिला है जो अहिंसक हैं, मानवीय हैं, रक्तपात जहाँ अनुपस्थित है। यदि हम भारतीय संत-साहित्य का अध्ययन-अवलोकन करें तो देखेंगे कि वहाँ मांसाहार और हिंसा को निकृष्ट और घृणित कृत्य बताया गया है। वहां मनुष्य और पशु-पक्षी सब एक ही ईश्वर की सृष्टि माने गये हैं, और अहिंसा को ही जीवन का सर्वोपरि आदर्श प्रतिपादित किया गया है। जैनों ने तो वनस्पति-मात्र में स्पन्दन माना है, और इसीलिए हर धड़कन के सम्मान की बात जैनधर्म में कही गयी है। किसी अंग्रेज कवि ने कहा है कि, "जब आदमी एक चींटी भी नहीं घड़ सकता तो उसे क्या अधिकार है कि जीवराशि का हनन करे।" सच भी है कि आप मकान बना सकते हैं, उसे गिरायें, धराशायी करें किन्तु जब आप एक धड़कन भी नहीं सिरज सकते तब फिर आपको हक़ नहीं है कि किसी के प्राण लें।

जिस भारत में धर्म के नाम पर कभी भीषण रक्तपात हुआ है, उसी भारत में ऐसे ऋषि-महर्षि भी हुए जिनकी समाधिस्थ मुद्रा से प्रभावित सिंह-गौ एक घाट पानी पीते रहे। इतिहास बताता है कि हमारे ऋषि नीवार-भोगी थे अर्थात् ऐसा अनाज खाते थे, जो बिना बोये पैदा होता था। अहिंसा की यह सर्वश्रेष्ठ भारतीय अभिव्यक्ति थी। कुछ लोग अहिंसा को कायरता का पर्याय मानते हैं, किंतु यह भूल है। अहिंसा का स्पष्ट अर्थ है प्रमादपूर्वक किसी के प्राणों की हानि करना। गोवध-बंदी को लेकर जो भी कदम उठाये जाने की पहल होती है, हुई है; उसका सीधा मतलब होता है देश की अपार पशु-संपदा की रक्षा। पशु और पेड़-पौधे सभी भी देश की बहुमूल्य संपदाएं कही जाती हैं। इनकी रक्षा हर देशवासी का कर्त्तव्य माना जाता है। कहा प्रायः यही जाता है कि व्यापक वन-समारोह होने चाहिये और वृक्ष लगाये जाने चाहिये, किंतु हम करते इसके विपरीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही हैं। वृक्ष लगाये जाते हैं, किंतु कुछ दिनों बाद उजड़ जाते हैं। हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम महत्ता किसी भी संदर्भ की जानते हैं। किन्तु आचरण में उसे बहुत कम प्रतिबिम्बित करते हैं। हम जानते हैं कि यदि वनस्पति नहीं होगी तो देश उजड़ जाएगा, मरुस्थल बन जाएगा। झाड़-पेड़ धरती को मरुस्थल होने से रोकते हैं। उसे हरा-भरा रखते हैं। सांप जैसा विषैला प्राणी भी खेती का मित्र है। वस्तुतः संसार का ऐसा कोई अस्तित्व नहीं है, जो संसार को सुन्दर बनाने में, उसे समृद्ध करने में अपनी भूमिका अदा न करता हो, किन्तु आदमी है कि इस एवज में उसके प्राणों का अपहरण करता है। खरगोश सुन्दर है, तो उसे आदमी खा जाना चाहता है; हरिण नयनाभिराम है तो आदमी उसका शिकार करता है; मतलब, जो सुन्दर है आदमी उसे दंडित करने पर तुला हुआ है।

आदमी के इस रुख से अन्ततः धरती की हानि ही है। वास्तव में सृष्टि का अपना एक स्वाभाविक सन्तुलन है, जिसे मनुष्य अपने अविवेकपूर्ण कृत्यों द्वारा बिगाड़ना चाहता है, बिगाड़ रहा है। वह धरती के चारों ओर मढ़ी हरी खोल को नष्ट करना चाहता है, जो आगे चल कर उसकी आगामी पीढ़ी को खतरे में डाल देगी। शायद हम नहीं जानते कि आदमी द्वारा उत्पन्न प्रदूषण को प्राणि-जगत् बहुत झेल रहा है। पेड़-पौधे वह सब खा रहे हैं, जो आदमी का उच्छिष्ट है, परित्यक्त है। कई पशु हमारे द्वारा विसर्जित सामग्री का उपभोग करते हैं और धरती के आगामी ज़हर को अमृत में बदलते हैं। सार-सार हम खा रहे हैं, और जो प्राणि-जगत् निस्सार को ग्रहण कर रहा है, उसे उपयोगी पदार्थों में बदल रहा है, उसके प्रति कृतज्ञ होने की जगह हम उसके प्राणों का संहार कर रहे हैं। देश में आज जितने कसाई-घर हैं, उतने पहले कभी नहीं रहे। यह परोपकारी प्राणि-जगत् के प्रति मनुष्य की कृतज्ञता है।

यह मानना कि कसाईखाने कोई अनिवार्यता हैं और पशुओं की आबादी पर एकमात्र नियंत्रण-साधन हैं, मूर्खतापूर्ण धारणा है। पश्चिम अब अपनी भूल समझने लगा है, और प्राकृतिक जीवन की ओर लौटने की ओर क़दम उठा रहा है, वहाँ शाकाहार बढ़ रहा है; किन्तु भारत पश्चिम की नक़ल पर है, यहाँ आमिषभोज बढ़ रहा है। मांस-मछली का आज अधिकाधिक उपयोग होता है। यह शुभ शकुन नहीं है। जो लोग आहार-विज्ञान के विशेषज्ञ हैं, वे मांसाहार से होने वाले अनगिन असाध्य रोगों की जानकारी दे सकते हैं। ये आहार-विज्ञानी न केवल मांसाहार की कायिक प्रक्रिया की बात करते हैं वरन् मन पर होने वाले असर और परिणाम की जानकारी भी देते हैं। भारत में तो यह कहावत है कि "जैसा खाये अन्न, वैसा होवे मन्न"। तामस भोजन तामस स्थितियों को उत्पन्न करता है। नित-प्रति होने वाले गृह-कलह, कत्ल, खून-ख़राबे, नई-नई क़िस्म के अपराध तामसिक आहार के ही नतीजे हैं। उधर चिकित्सा-शास्त्र ने भी यह कहना शुरू कर दिया है कि मांसाहार शराब तथा अन्य मादक द्रव्यों का उपयोग अनेक असाध्य रोगों को उत्पन्न करता है। इनका त्याग किया जाना चाहिये। चारों ओर से आदमी को विशेषज्ञ आगाह कर रहे हैं उन खतरों के प्रति जो उसके असंतुलित और अविवेकपूर्ण खानपान की वजह से उसके चारों ओर मंडरा रहे हैं। मैं अपने एक ऐसे मित्र को जानता हूँ जो अव्वल दर्जे के पर्वतारोही हैं, किन्तु कट्टर शाकाहारी हैं। उनका कथन है कि जो लोग आमिषभोजी हैं वे पर्वतारोहण में जल्दी थक कर चूर हो जाते हैं, हाँफने लगते हैं, किन्तु मैं कभी किसी प्रकार की थकान महसूस नहीं करता। इससे यह सिद्ध हुआ कि मांसाहार भले ही हमारी स्वाद-लिप्सा को तृप्त करता हो किन्तु वह हितकर और पौष्टिक नहीं है।

जैनधर्म शताब्दियों से शाकाहार और अहिंसक जीवन-शैली का प्रतिपादन करता आ रहा है। वस्तुतः भारतीय संस्कृति, धर्म और दर्शन से मांसाहार का कोई तालमेल नहीं है। इसकी आध्यात्मिकता के साथ तो स्वप्न में भी कोई संगति नहीं है। धर्म, फिर संसार का वह कोई भी धर्म हो, मांसाहार का पक्षधर नहीं है, वहाँ प्राणि-हिंसा का सर्वत्र विरोध किया गया है; किन्तु आज जो हो रहा है वह मनुष्यता को कलुषित-कलंकित करने वाला है। होना वस्तुतः यह चाहिये कि देश के सारे कसाईखाने बन्द कर दिये जाएं, या कम से कम सीमित कर दिये जाएँ और शराब पर कड़ी पाबन्दी लगायी जाए, इससे हमारी खाद्य समस्या उग्र नहीं वरन् सह्य होगी। देखा यह गया है कि जो मांसाहारी हैं वे मांस तो खाते ही हैं, शाकाहार भी लेते हैं और शाकाहारी की अपेक्षा परिमाण में अधिक खाते हैं। एक अध्ययन का निष्कर्ष है कि शाकाहारी मिताहारी होता है, उसकी सात्विकता उसे शरीर से अन्यत्र ले जाती है और आध्यात्मिक होने के कारण वह न तो जिह्वालोलुपी ही होता है और न ही अधिक आहारी; अतः जैनों को जीव-रक्षा का जो कार्य आज मन्द-सुस्त पड़ा हुआ है, अधिक रफ्तार से करना चाहिये, क्योंकि हम जानते हैं कि प्रकृति का यह सूत्र सदैव हमारे साथ है कि "जैसा, जो बोया जाएगा, वैसा वह फसल के रूप में सामने आयेगा"। यदि हम हिंसा, बैर बोयेंगे तो हिंसा की फसल ही हमें काटनी होगी। मांसाहार का परिणाम कभी-न-कभी किसी बड़ी बदनसीबी के रूप में प्रकट हुए बिना नहीं रहेगा, इसलिए जैनमात्र को शाकाहार के प्रचार-प्रसार और जीव-रक्षा का एक न्यूनतम कार्यक्रम बनाना चाहिये। इसकी एक रूपरेखा इस तरह हो सकती है—

(१) शाकाहार के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए ऐसे शहरी और ग्रामीण क्लबों की स्थापना की जाए जो शाकाहार की उपयोगिता के हर पहलू को बतलाते हों और मांसाहार से होने वाली हानियों को तर्कसंगत ढंग से प्रतिपादित करते हों। इस तरह की छोटी-छोटी दस्तावेजी फिल्में भी तैयार की जानी चाहिये। कुछ साहित्य भी प्रकाशित किया जाना चाहिये। उन लोगों के हृदय-परिवर्तन के लिए भी प्रयत्न होना चाहिये जो जीव-हिंसा के व्यवसाय में लगे हुए हैं, यदि समृद्ध जन समाज उन्हें आजीविका के कोई विकल्प दे सकता हो तो उसे वैसा भी अपने सामाजिक स्तर पर करना चाहिये।

(२) कसाईघरों को बन्द कराने के लिए व्यापक आन्दोलन करना चाहिये, इस व्यवसाय में व्यस्त व्यक्तियों को कुछ अन्य

(शेष पृष्ठ १९० पर)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org